आधुनिक संकट एवं कामायनी में युगबोध

– डॉ० रवीन्द्रनाथ मिश्र

आधुनिक संकट बोध की समस्या मूल्यों के बिखराव के कारण हो रही है। प्रायः कहा जा रहा है कि पुराने मूल्य ध्वस्त हो चुके या हो रहे हैं और नए मूल्य बन नहीं पा रहे हैं, अतः आधुनिक व्यक्ति मूल्यों के संघात या मूल्य-हीनता के दौर से गुज़र रहा है। पूँजीवादी व्यवस्था में प्रचलित मूल्यों के मानदण्ड मूलतः भौतिकवादी, सुखवादी और उपयोगितावादी हैं। सामान्य व्यक्ति धन और काम से प्राप्त भोगों उत्तम भोजन, आवास, यौन परितृप्ति धन, यश, मान और क्षमता आदि की प्राप्ति को ही जीवन का लक्ष्य मानता है। आज व्यक्ति की सम्पन्नता एवं प्रतिष्ठा उपभोग के साधनों पर निर्भर है। ऐसे सामाजिक परिवेश में पला-बढ़ा व्यक्ति स्वाभाविक रूप से प्रति-स्पर्धावादी हो रहा है और उसके लिए साध्य की प्राप्ति में साधनों की पवित्रता आवश्यक नहीं मानी जा रही है। परिणामस्वरूप अनेक संकटों का उदय हो रहा है।

संकट की इस घड़ी में 'कामायनी' हमारे लिए कितनी प्रासंगिक हो सकती है यह एक विचारणीय मुद्दा है। इसकी जांच पडताल हम तत्कालीन संदर्भों में करते हुए आधुनिक संकट बोध की तलाश करेंगे क्योंकि कतिपय परिस्थितियाँ लगभग वैसी ही है। भारतीय संस्कृति के गम्भीर मननकर्ता जयशंकर प्रसाद ने अपने जीवन की सम्पूर्ण साधना को 'कामायनी' में निचोड़कर रख दी है। साहित्य की जीवन्तता युगबोध पर आधारित होती है। तुलसी ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम की पौराणिक कथा के अन्तर्गत अपने युग की वर्ण व्यवस्था, सामाजिक विश्रृंखलता, राजनीतिक अराजकता, व्यष्टि और समष्टि का संघर्ष, सगुण-निर्गुण का द्वन्द आदि युगचेतना को अपनी रचना का विषय बनाया। यही कारण है कि पांच सौ वर्षों के बाद भी रामचरित मानस प्रासंगिक बना है क्योंकि उसमें तत्कालीन सभी संकट बोधों की सफल अभिव्यक्ति हुई है।

आधुनिक युग में प्रगतिवादियों ने छाया-वाद को अन्तर्मुखी, पलायनवादी और यथार्थ से दूर आदि आक्षेप लगाते हुए सामाजिक चेतना पर विशेष बल दिया और रचना में सामाजिक सौन्दर्य की तलाश करना शुरू कर दिया। 'कामायनी' छायावाद एवं प्रगतिवाद के साध्य की कृति है इसलिए इस पर वे सारे आरोप निर्मूल सिद्ध होते हैं। अगर कहीं कुछ हैं भी तो वह संदर्भ के अनुसार उचित है। कामायनी छायावादी सौन्दर्य चेतना की अनुपम उपलब्धि होने के साथ-साथ आधुनिक युग की सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना का एक प्रामाणिक महाकाव्य है।

'कामायनी' में कवि ने अपने युग की अति भौतिकतावादी श्रांत-क्लांत मानवता को

मनु, श्रद्धा और इडा के पौराणिक आख्यान के माध्यम से 'सामरस्य' के द्वारा 'शांति लाभ' का स्वर्णिम संदेश दिया है। कामायनी में वर्तमान की अभिव्यक्ति के लिए अतीत के पौराणिक आयाम को इसलिए ग्रहण किया गया है, जिससे कि हम अपनी समस्याओं का तटस्थ होकर विश्लेषण कर सकें।

कामायनी में आधुनिक संकट बोध का स्वर अभिधा में व्यक्त न होकर ध्वन्यार्थ में व्यक्त हुआ है। कामायनी का काल सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से आशा-निराशा, क्षोभ और नए-नए आन्दोलनों का युग था। इस समय राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं साहित्यिक क्षेत्रों में कई उतार-चढाव आ रहे थे। पुराने मूल्य टूटे रहे थे और नए मूल्य स्थापित हो रहे थे। घरेलू-धन्धे नष्ट हो रहे थे और उद्योगों के विकास के कारण पूंजीवादी व्यवस्था के जन्म के साथ-साथ मार्क्सवादी जीवन-दर्शन भारतीय जनमानस को आन्दोलित कर रहा था। पाश्चात्य शिक्षा, साहित्य और संस्कृति के प्रभाव के कारण मनुष्य आध्यात्मिक मूल्यों से हटकर भौतिकता की ओर अग्रसर हो रहा था जिसके कारण असन्तोष, क्षोभ कुंठा, संत्रास और अतृप्ति बढ़ती जा रही थी।

जयशंकर प्रसाद ने ऐसे समय में जीवन की विसंगतियों से मुक्त होने केलिए इच्छा क्रिया और ज्ञान के सामंजस्य पर आधारित समरसता के भव्य जीवन सिध्दान्त को अतीत के आयाम पर प्रस्तुत किया।

गाँधीवाद : कामायनी की रचनाकाल का समय मुख्यत: गाँधीवादी विचार धारा से प्रभावित था। आजादी की लड़ाई के अगुवा गाँधीजी ने जिनका कि तत्कालीन जनमानस पर सर्वाधिक प्रभाव था। और उनका जीवन दर्शन मूलत: उपनिषदों के सर्वात्मवाद तथा बौद्ध एवं जैन की करुणा पर आधारित था। सत्य और अहिंसा ये दो उनके मूल सिद्धान्त थे। डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है कि "वास्तव में अहिंसा सत्य का भावपक्ष है।" "कामायनी" की दृष्टि सर्वमंगलवादी है, उपयोगितावादी नहीं। उपयोगितावादी दृष्टि स्वार्थ के आधार पर चुनाव करती है, जो अपने या अपनों केलिए अनुकूल प्रतीत होती है उसका चयन और शेष का वर्जन उसका स्वभाव है। सुन्दरता, पवित्रता, उदारता जैसे मूल्य उपयोगितावादी केलिए विशेष अर्थ नहीं रखते। कामायनी में श्रद्धा गांधीवादी चेतना की संवाहिका है। उसका व्यक्तित्व दया, ममता और करुणा से भरा है। वह मनु के अशान्त एवं दु:खी मन को शान्त करते हुए कहती है-"जिसे तुम समझे हो अभिशाप, जगत की ज्वालाओं का मूल ईश का वह रहस्य वरदान, कभी मत इसको जाओ भूल। श्रद्धा अपना सब कुछ उत्सर्ग कर मनु से सृष्टि के कल्याण की कामना करती है-दया, माया, ममता लो आज, मधुरिमा लो, अगाध विश्वास हमारा हृदय-रत्न-निधि स्वच्छ तुम्हारे लिए खुला है पास। बनो संस्कृति के मूल रहस्य, तुम्हीं से फैलेगी वह बल, विश्व-भर सौरभ से भर जाय सुमन के खेलों सुन्दर खेल। कामायनी में मनु आधुनिक युग के उलझे हुए प्रश्न हैं और श्रद्धा उन प्रश्नों का उत्तर। वह कहती है-और वह क्या तुम सुनते नहीं विधाता का मंगल वरदान-शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूँज रहा जय-गान, डरो मत, अरे अमृत सन्तान। अग्रसर है मंगलमय वृद्धि, पूर्ण आकर्षण जीवन केन्द्र खिची आवेगी सकल

समृद्धि। श्रद्धा का रूप सर्वमंगला का है। कामायनी के अन्तिमचरण में मनु स्वयं कहते हैं–

हे सर्वमंगल। तुम महती सबका दुःख
अपने पर सहती
कल्याणमयी वाणी कहती, तुम क्षमा
निलय में ही रहती।

कामायनी में उदारता, क्षमा, सुन्दरता, सेवा, सहिष्णुता आदि जैसे गुणों पर बहुत बल दिया गया है। स्थूल उपयोगिता की तुलना में कामायनी में मंगलकारी दृष्टि पर विशेष ज़ोर दिया गया है।

'कामायनी की दृष्टि समष्टिवादी है, व्यक्तिवादी नहीं। मनु के स्वार्थी व्यक्तिवादी रूप की भयावह परिणति इसका निश्चित प्रमाण है। 'मनु' अहंकार से युक्त मन के प्रतीक हैं अहं के कारण ही उनका राग-अनुराग आत्मकेन्द्रित हो जाता है। जिसके परिणाम स्वरूप वे भावी शिशु से ईर्ष्या करने लगते हैं। हिंसक वृत्तियों के उदय के कारण पशुओं की बलि चढ़ाते हैं। श्रद्धा हिंसा केलिए मनु को मना करती है-

अपनी रक्षा करने में जो चल जाय
तुम्हारा कहीं अस्त्र,
वह तो कुछ समझ सकी हूँ मैं हिंसक से
रक्षा करे शस्त्र।
पर जो निरीह जीकर भी कुछ उपकारी
होने में समर्थ,
वे क्यों न जियें, उपयोगी बन इसका मैं
समझ सकी न अर्थ।

"कामायनी में मनु और श्रद्धा के माध्यम से अहिंसा के जिस रूप को दर्शाया गया है, उसमें वर्तमान युग की गांधीवादी भावना का स्वर मुखरित हुआ है। तकली और सूत कातना आदि बातें गाँधी विचारधारा को पुष्ट करती है। तुम दूर चले जाते हो जब–तब लेकर तकली, यहाँ बैठ, मैं उसे फिराती रहती हूँ अपनी निर्जनता बीच पैठ। मैं बैठी गाती हूँ तकली के प्रतिवर्तन में स्वर विभोर–चल री तकली धीरे-धीरे प्रिय गये खेलने को अहेर।

गाँधीजी आचरण की शुद्धता पर बल देते थे जिसकी अभिव्यक्ति श्रद्धा के द्वारा कदम-कदम पर हुई है। अपने तप और त्याग द्वारा मनु की अहं वृत्ति का परिष्कार करती है। सारस्वत प्रदेश के निर्माण एवं इड़ा पर किए गए अत्याचार से घायल मनु के मन पर श्रद्धा ममता का लेप लगाती है। कामायनी के मनु आधुनिक युग के उस पुरुष की भाँति हैं जो कि भौतिक सुखों की तलाश में मृगतृष्णा की भाँति इधर-उधर भटक रहा है। प्रसाद ऐसे भटके हुए पुरुषों को श्रद्धा के माध्यम से नई राह दिखाना चाहते हैं। इस भटकाव का कारण आंतरिक संकीर्णता है जिससे कि ऊँच-नीच और अपने-पराए की भावना का उदय होता है। आनन्द–सर्ग में प्रसाद की निम्न पंक्तियाँ उपरोक्त कटुता की भावना को समाप्त करती है।

सब भेद-भाव भुलाकर, दुख–सुख को
दृश्य बनाता,
मानव कह रे! यह मैं हूँ, यह विश्व
नीड़ बन जाता।

गाँधीजी ने ऊँच-नीच की भावना भुलाकर समाज में समानता पर बल दिया। व्यक्तिगत अहं का समष्टिगत चेतना में विसर्जन

ही "सर्वात्मवाद" है। मनु के स्वर के विस्तार करने में सृष्टि के कण-कण में चेतना दिखाई देती है।

हम अन्य न और कुटुम्बी, हम केवल
एक हमी है,
तुम सब मेरे अवयव हो, जिसमें कुछ
नहीं कमी है।

वैसे तो मुक्तिबोध ने कामायनी का मूल्यांकन सामाजिक संदर्भों में करते हुए श्रद्धा पर अनेक आरोप लगाए हैं परन्तु वास्तविक रूप से परम्परावादी मूल्यों को ध्यान में रखते हुए यदि इसकी विवेचना की जाए तो श्रद्धा भारतीय नारी की आदर्श प्रतिमूर्ति है। पारिवारिक मूल्यों की स्थापना में नारी के त्याग को भुलाया नहीं जा सकता वहीं पर इसको बनाए रखने में पुरुष की भागीदारी को भी नज़रंदाज नहीं किया जा सकता। मार्क्सवादी विचारधारा की वस्तुपरक विचारधारा ने, ममता, चिंतन पद्धति, करुणा, प्रेम आदि भारतीय आध्यात्मिक मूल्यों को चुनौती तक दे डाली। स्वस्थ सामाजिक दृष्टिकोण से इसकी महत्ता को अस्वीकारा नहीं जा सकता परन्तु परम्परागत जीवन-दर्शन की दृष्टि से इसने अनेक विसंगतियों को जन्म दिया जिसके फलस्वरूप भारत में मनीषियों एवं चिन्तकों के समक्ष एक धार्मिक संकट खड़ा हो गया क्योंकि पुराने मूल्यों को एकदम ध्वस्त करके नए को अपनाना अपने आप में कहना तो आसान था परन्तु व्यावहारिक रूप में बहुत मुश्किल। तत्कालीन भारत के प्रगतिशील आन्दोलनों पर एवं समाज पर मार्क्सवाद का व्यापक प्रभाव पड़ रहा था। प्रसाद जी इस प्रभाव से वंचित नहीं थे। और पूर्णतः प्रभावित भी नहीं थे क्योंकि इसका संबंध भौतिक यथार्थवाद से था और प्रसाद जी परम्परा में विश्वास करते थे इसलिए उन्होंने दोनों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया।

मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की झलक मनु द्वारा विकसित सारस्वत प्रदेश के भौतिक निर्माण में दिखाई देती है क्योंकि इसमें सभी प्राणियों के मंगलकामना की बात छिपी है। प्रसाद जी उस सामाजिक व्यवस्था के पोषक नहीं थे जिसमें कि अर्थ की भौतिक व्यवस्था सदैव आध्यात्मिक मूल्यों के द्वारा नियंत्रित होनी चाहिए अन्यथा भावी स्थितियाँ भयानक सिद्ध होंगी। शासन व्यवस्था की सुदृढता केलिए भी वे भौतिक मूल्यों के साथ-साथ आध्यात्मिक मूल्यों पर बल देते थे और राजा-प्रजा के बीच समरसता की स्थापना करना चाहते थे। श्रद्धा अपने पुत्र कुमार को इड़ा की सहायता से मनु की विद्रोही जनता के बीच समरसता के प्रचार का आदेश देती है।

यह तर्कमयी तू श्रद्धामय,
तू मननशील कर कर्म अभय,
इसका तू सब संताप निचय,
हर ले, हो मानव भाग्य उदय,
सबकी समरसता कर प्रचार
मेरे सुत! सुन माँ की पुकार।

"समरसता" शैव-दर्शन का एक विशिष्ट पारिभाषिक शब्द है। शैव-दर्शन से प्रभावित प्रसाद के सभी वर्गों के बीच श्रद्धा विश्वासमयी रागात्मक वृत्ति का प्रचार कर "समरसता" के माध्यम से आदर्श समाज की स्थापना करना चाहते थे।

राजतंत्रात्मक व्यवस्था: पौराणिक काल में राजा के न्यायप्रिय आचरण के कारण उसे ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था। गोस्वामी तुलसीदास की "जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी सो नृप अवसि नरक अधिकारी और" जो अनीति कहु भाखौ भाई, सो मोहि बरज्यौ भय बिसराई आदि उक्तियाँ समय के साथ अस्तित्व विहीन होती गई। कामायनी में प्रसाद ने मनु के माध्यम से सारस्वत प्रदेश के निर्माण एवं ज्ञान-विज्ञान से युक्त नगर की रचना कराकर उनकी भोग-विलासी एवं सामन्तवादी प्रवृत्तियों का उल्लेख जिस प्रकार से किया है क्या उसमें हमें आज के राजनेताओं की झलक नहीं दिखाई देती है? सारस्वत प्रदेश की जनता ने मनु के सामन्तवादी अर्थव्यवस्था और पूंजीवादी शोषण का विरोध इस प्रकार किया है –

तुमने योग क्षेम से अधिक संचयवाला
लोभ दिखाकर इस विचार-संकट में
डाला।
हम संवेदनशील हो चले यही मिला सुख
कष्ट समझने लगे बनाकर निज कृत्रिम
दुख।

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रसाद ने आज की भारतीय जनता की मार्मिक वेदना को व्यक्त किया है जिसमें कि वे आज पचास वर्षों से छले जा रहे हैं।

औद्योगिक विकास एवं भोग-विलास: प्रसाद जी औद्योगिक विकास से उत्पन्न संकट को समझ रहे थे कि जैसे-जैसे हम भौतिकता की ओर बढ़ते जाएंगे वैसे-वैसे हमारी प्रवृत्तियाँ भोग-विलास से मुक्त होती जाएंगी जिसे उन्होंने मनु के माध्यम से पहले ही व्यक्त कर दिया था।

आकर्षण से भरा विश्व यह,
केवल भोग्य हमारा,
जीवन के दोनों कूलों में,
बहे वासना - धारा।
तुच्छ नहीं है अपना सुख भी,
श्रद्धे वह भी कुछ है,
दो दिन के इस जीवन का तो,
वही चरम सब कुछ हैं।

मनु की भोग-विलासी प्रवृत्तियाँ यहाँ इतनी बढ़ जाती हैं कि वे अपने भावी शिशु से भी ईर्ष्या करने लगते हैं –

यह द्वैत, अरे यह द्विविधा तो
है प्रेम बांटने का प्रकार,
भिक्षुक मैं ना, यह भी कभी नहीं
मैं लौटा लूंगा निज विचार।

कामायनी में अभिव्यक्त प्रसाद की विचार धारा में हमें आज के जनमानस में व्याप्त वे बहुत सी बाते हैं जो कि समय के साथ मुखरित हो रही हैं। केरल एवं देश के अन्य भागों में हो रही आत्महत्याएं इस बात की ओर संकेत करती हैं कि भौतिकता की आंच अब असहनीय हो रही है। कामायनी की कथा ऐतिहासिक होने के साथ एक मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक चेतना की सुदृढ़ एवं शाश्वत भावभूमि पर स्थापित है परन्तु इसमें आधुनिक संकट एवं इसके समाधान का हल भी ढूँढा गया है। मनु श्रद्धा और इडा के माध्यम से प्रसाद ने वस्तुतः आज के मानव की आशा, निराशा, दुर्बलता, ताप, शाप, दुख, दैन्य संघर्ष और वैषम्य की जड़ता आदि की अभिव्यक्ति की है।

प्रसाद ने कामायनी की प्रतिकात्मकता के माध्यम से हमारी भाववृत्ति और कर्मवृत्ति और ज्ञानवृत्ति में समन्वय स्थापित किया है। इन तीनों वृत्तियों के अलग-अलग होने के कारण ही मनुष्य दुःख पाता है उनका कहना है कि–

ज्ञान दूर कुछ, क्रिया भिन्न है
इच्छा क्यों पूरी हो मन की,
एक दूसरे से न मिल सके,
यह विडम्बना है जीवन की।

प्रसाद तीनों वृत्तियों में सामंजस्य स्थापित कर समरसता यानी आनंदवाद की स्थापना करते हैं यही उनकी कामायनी का अन्तिम उद्देशय हैं जिसके माध्यम से वे आध्यात्मिक एवं भौतिक मूल्यों में समन्वय स्थापित करते हुए मानव मात्र की मंगलकामना का उपदेश देते हैं। सच्चा सुख प्राप्त करने एवं आधुनिक संकट से मुक्ति का रास्ता यह है कि–

औरों को हँसते देखो मनु,
हँसो और सुख पाओ।

अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओं।

विडम्बना इस बात की है कि हंसी गायन और सुख की सीमा असीमित होती जा रही है जिसके कारण आधुनिक संकट बोध और गहराता जा रहा है। आवश्यकता इस बात कि हम इस संकट को समझे और बढ़ती हुई भौतिक प्रवृत्तियों पर विराम लगाएँ।

पुस्तक - समीक्षार्थ

केरल से प्रकाशित 'साहित्य मंडल पत्रिका' भारत भर के विश्वविद्यालयों के अध्यापकों शोधार्थियों तथा सुरुचि सम्पन्न पाठकों के बीच प्रचलित है। अपनी पुस्तक को पाठक के ध्यान में लाने के इच्छुक लेखक/प्रकाशक बन्धुओं से अनुरोध है कि वे अपनी सद्य प्रकाशित पुस्तक की दो दो प्रतियाँ समीक्षार्थ निम्न लिखित पते पर भेज दें।

डॉ. टी. एन. विश्वन
प्रबन्ध सम्पादक
साहित्य मण्डल पत्रिका
कारिक्कामुरी, कोच्चिी - 682 011